सन्देश संख्या १५१

तुम क्या, तुम्हारा भाग्य क्या?

वस्तुतः तुम जीवन हो, जो दिव्य है, असीम है, अज्ञेय है, अनभिव्यक्त है। जीवन चैतन्य है, उसका न आदि है, न अन्त । न यह जन्म लेता है, न मरता है । इसका न पूर्व जन्म था, न पुनर्जन्म ही है । जीवन को 'पूर्वजन्म' या 'पुनर्जन्म' जैसी अवधारणाओं में कोई रुचि नहीं है । जीवन वैसा नहीं है, जैसा तुम जानते हो । जीवन स्वयं को अभिव्यक्त करता है, फिर भी इसे 'तुम्हारे' अनुभवों के सीमित रज्जु में बाँधा नहीं जा सकता । यह तो अनुभव शून्यता है, भव्यता है, दिव्यता है । अतः जीवन को तुम्हारे भाग्य सम्बन्धी अवधारणा में कोई रुचि नहीं है । तुम (विभेदकारी एवं भ्रामक चित्त 'मैं'), सोचते हो कि तुम महान हो । नक्षत्रमंडल एवं देवगण तुम्हारे सहायक हैं, वे ही 'तुम्हारे' भाग्य के नियंता हैं, दिशा निर्देशक हैं । तुम मन्दिरों, मस्जिदों, गिरजाघरों में अपने देवताओं एवं भगवानों को प्रसन्न करने हेतु जाते हो ताकि वे तुम्हारे भाग्य की रक्षा करें, तुम्हारे सौभाग्य की वृद्धि करें । तुम अपराध करते हो एवं फिर उसे स्वीकार करने का दंभ भी करते हो । इस तरह तुम अपने मिथ्या 'मैं' को सुदृढ़ किये रहते हो, तुम यथावत् अपने को बनाये रखते हो । तुमने अपने 'पवित्र ग्रन्थों' से अनेक विश्वासों को उधार ले रखा है ताकि तुम अपनी धर्मान्धता, युद्धों की विभत्सता एवं नृशंसता की उत्तेजना का सुख ले सको । तुम अपने को 'आत्मा' मानते हो तथा अपने उद्धार हेतु एवं स्वर्ग–प्राप्ति हेतु 'ईश्वर–पुत्र' की प्रतीक्षा करते हो । उसके लिए तुम पिछले छः दिनों के मध्य किए गए अपने समस्त पापों को स्वीकार करते हो और फिर उन्हें पवित्र क्रूस के हवाले कर देते हो । इस प्रकार तुम फिर और इसलिए अगले छः दिनों तक पूर्ववत् पाप करने हेतु तैयार हो जाते हो।

शरीर की विभेदकारी चित्तवृत्ति के उपादानों एवं पंजीकरणों द्वारा मिथ्या 'तुम' का प्रक्षेपण किया जाता है और फिर ये दोनों, एक दूसरे को निरन्तर बनाये रखने में एक दूसरे की सहायता करते रहते हैं । इस तरह, ये शरीर में विद्यमान चैतन्य को कभी भी उसका स्वामी नहीं होने देते । और इसीलिए शरीरस्थ जीवन, जीवन के बारे में तुम्हारे अपने विचारों के कारण ही अनखिला रह
जाता है ।

'मैं–पना' को सतत् बनाये रखने की भयंकर चिन्ता के कारण 'तुम' यह निष्कष निकाल लेते हो कि नक्षत्र ही तुम्हारे भाग्य को दिशा देते हैं, तुम्हारे भाग्य विधाता हैं । आखिर तुम इतने महान जो हो । आओ देखो वस्तुतः तुम हो क्या?

चित्र १ : पृथ्वी की तुलना में वृहस्पति को देखो । यह भी पृथ्वी की तरह ही एक ग्रह है जो पृथ्वी के साथ–साथ सूर्य की परिक्रमा करता है ।

चित्र २ : पृथ्वी को सूर्य की तुलना में देखो ।

चित्र ३ : यहाँ सूर्य को आर्कट्यूरस तारा की तुलना में देखो । पृथ्वी अब अदृश्य है ।

चित्र ४ : आर्कट्यूरस तारा को ऐन्टेअरोज तारा की तुलना में देखो । वृहस्पति ग्रह (तुम्हारा गुरू) भी अब अदृश्य हो गया है ।
यहाँ तुम्हारे सूर्य भगवान् भी इतने लघुकाय हैं जिन्हें सूक्ष्मदर्शी यंत्र (माइक्रोस्कोप) द्वारा ही देखा जा सकता है । वर्तमान जानकारी के
अनुसार ऐन्टेअरोज तारा आकार में ब्रह्माण्ड का १५वाँ सबसे बड़ा तारा है जबकि अन्य १४ तारे इससे भी बहुत बड़े हैं ।

ऐसे में, अब जरा सोचो, तुम्हारी यह पृथ्वी कहाँ है? पृथ्वी की तुलना में असंख्य लोगों के मध्य तुम क्या हो? तुम्हारे ज्योतिष्विदों अर्थात् भाग्यवक्ताओं द्वारा आकलित और भाषित तुम्हारे भाग्य का अस्तित्व क्या है? जरा सोचो, ज्योतिष्शास्त्रों से प्राप्त आश्वासनों एवं त्वरित सान्त्वनाओं की माँग के बिना क्या जीना सम्भव नहीं है? क्रिया समस्त प्रकार के अनुबन्धनों से मुक्त करती है और इसलिए वह व्यक्ति को कार्य – कारण के बन्धन से भी निर्बन्ध करती है । ज्योतिषशास्त्रों का यदि कुछ महत्त्व है भी, तो क्या क्रियावानों पर भी उसका प्रभाव होगा?

तुम अपने अन्तर अस्तित्व की दिव्यता, अद्वैतता एवं निर्विकल्पता के प्रति जागृत होओ । भाग्य के बारे में चिन्ता मत करो । भगवत्ता विस्मयपूर्ण एवं रहस्यमय है । भाग्य मिथ्या 'मैं' की काल्पनिक समस्या है ।
जय दिव्यता